eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

स्वतंत्र भारत में पर्यावरण प्रदूषण से संबंधित नीतियों का व्यावहारिक प्रभाव

डॉ. मधुप कुमार[1]
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर (शिक्षाशास्त्र विभाग) भारतीय महाविद्यालय फर्रुखाबाद (उ.प्र.)

Received: 22 May 2026 Accepted & Reviewed: 25 May 2026, Published: 31 May 2026

Abstract

भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक कानून और नीतियाँ बनाए गए हैं, जिनका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा, प्रदूषण नियंत्रण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना है। जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम, 1974 और 1977, देश में जल स्रोतों को प्रदूषण से मुक्त रखने और स्वच्छ जल आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए पारित किए गए। इसके तहत केंद्रीय और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की स्थापना की गई, जिन्हें जल गुणवत्ता की निगरानी और प्रदूषण फैलाने वालों पर कार्रवाई का अधिकार दिया गया। वायु प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम, 1981 का उद्देश्य औद्योगिक इकाइयों, मोटर–वाहनों और अन्य स्रोतों से निकलने वाले प्रदूषकों का नियंत्रण करना और वायु गुणवत्ता बनाए रखना है। इसमें राज्यों को प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र घोषित करने और औद्योगिक गतिविधियों पर नियंत्रण का अधिकार प्राप्त है। 1987 में इसमें ध्वनि प्रदूषण को भी शामिल किया गया। वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972, वन्य प्राणियों और पौधों की संकटग्रस्त प्रजातियों की रक्षा के लिए बनाया गया। इसमें अवैध शिकार और व्यापार पर रोक, राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्यों का प्रबंधन, और वन्यजीवन परामर्श बोर्ड की स्थापना शामिल है। वन संरक्षण अधिनियम, 1980 वनों के अंधाधुंध विनाश को रोकने, वनों के संरक्षण और पुनरोद्धार को बढ़ावा देने तथा पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने हेतु पारित किया गया। ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए विशेष कानून नहीं है, पर वायु अधिनियम, 1981 और पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत ध्वनि को प्रदूषण का प्रमुख स्रोत मानकर नियंत्रण के नियम बनाए गए हैं। राष्ट्रीय स्तर पर ध्वनि स्तर मानक, शांत क्षेत्रों की सुरक्षा और दोषियों के विरुद्ध कार्रवाई की व्यवस्था है। पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986, भारत का व्यापक कानून है, जो वायु, जल, भूमि और जैव विविधता के संरक्षण हेतु केंद्र और राज्य सरकारों को शक्तियाँ प्रदान करता है। इसमें नागरिकों को भी पर्यावरण उल्लंघन की शिकायत दर्ज कराने का अधिकार है। जैव–विविधता अधिनियम, 2002, जैविक संसाधनों के संरक्षण, सतत उपयोग और लाभ वितरण सुनिश्चित करता है। इसके तहत राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर प्राधिकरणों और समितियों की स्थापना की गई। राष्ट्रीय जल नीति, 2002, जल संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग, संरक्षण और सतत प्रबंधन के लिए दिशा–निर्देश प्रदान करती है, जबकि राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2004, विकास और पर्यावरण संरक्षण में संतुलन बनाए रखने, संकटग्रस्त संसाधनों की रक्षा और नागरिकों के स्वस्थ पर्यावरण में जीवन के अधिकार को सुनिश्चित करने पर जोर देती है। वन अधिकार अधिनियम, 2006, वनवासियों और जनजातियों के वन संसाधनों पर वैध अधिकार प्रदान करता है और वन संरक्षण में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करता है। इन सभी कानूनों और नीतियों के बावजूद भारत में जल, वायु और ध्वनि प्रदूषण, वन कटाव और जैव विविधता हानि जैसी समस्याएँ गंभीर बनी हुई हैं। न्यायपालिका ने स्वच्छ पर्यावरण को मौलिक अधिकार मानकर जनहित याचिकाओं, प्रदूषित इकाइयों की बंदी, सी.एन.जी का प्रयोग, और पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से संरक्षण को बढ़ावा दिया है। भारत में पर्यावरण संरक्षण में कानून, नीति और न्यायपालिका की भूमिका

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

महत्वपूर्ण हैं, लेकिन उनकी प्रभावशीलता के लिए नागरिकों की सक्रिय भागीदारी और नीति के गंभीर क्रियान्वयन की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द– पर्यावरण संरक्षण, जल, वायु, ध्वनि और वन प्रदूषण इत्यादि।

Introduction

भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 में लागू हुआ था। भारतीय संविधान में पर्यावरण संरक्षण के से संबंधित प्रावधानों को प्रत्यक्ष रूप में कोई उल्लेख नहीं किया गया था। सन् 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर आकृष्ट हुआ। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48 ए तथा 51 ए (जी) जोड़ें। संविधान के अनुच्छेद 48 ए राज्य सरकार को निर्देश देता है, कि वह पर्यावरण की सुरक्षा और उसमें सुधार सुनिश्चित करे, तथा देश के वनों तथा वन्यजीवन की रक्षा सुनिश्चित करे'। अनुच्छेद 51 ए (जी) नागरिकों को कर्तव्य प्रदान करता है, कि वे 'प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करे तथा उसका संवर्धन करे। भारत के समस्त नागरिक सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे। स्वतंत्रता के पश्चात बढते औद्योगिकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरंतर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी को प्रभावी नियंत्रण व प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में सरकार ने समय–समय पर अनेक कानून व नियम बनाए। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषण नियंत्रण व निवारण था। भारत में पर्यावरण संबंधित कानूनों का निर्माण उस समय किया गया था जब पर्यावरण प्रदूषण देश में इतना व्यापक नहीं था। अतः इनमें से अधिकांश कानून अपनी उपयोगिता एक कसौटी पर खरे नहीं उतर रहे हैं। भारतीय संविधान में लिखित काननू व नियम पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं जिनका विस्तारपूर्वक वर्णन निम्नलिखित हैं।

जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम, 1974 तथा 1977– भारत में जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम, 1974 देश के पर्यावरण संरक्षण इतिहास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण मील का पत्थर है।1960 के दशक में जैसे–जैसे औद्योगीकरण और शहरीकरण बढ़ा, नदियों और जल स्रोतों का प्रदूषण गंभीर समस्या बन गया। इस समस्या की गंभीरता को देखते हुए, 1963 में गठित एक समिति ने जल प्रदूषण नियंत्रण के लिए एक केंद्रीय कानून बनाने की सिफारिश की। इसके आधार पर केंद्र सरकार ने 1969 में एक विधेयक तैयार किया, जिसमें कहा गया कि उद्योगों की वृद्धि और शहरी विस्तार के कारण नदियाँ, झीलें और अन्य जल स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं, जिससे न केवल पेयजल और कृषि प्रभावित हो रहे हैं बल्कि मत्स्य पालन और देश की अर्थव्यवस्था को भी क्षति हो रही है। यह विधेयक 30 नवंबर 1972 को संसद में प्रस्तुत किया गया और दोनों सदनों से पारित होने के बाद 23 मार्च 1974 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई। इसके साथ ही यह कानून 26 मार्च 1974 से पूरे देश में लागू हुआ। इसे "जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1974" कहा गया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य जल स्रोतों को प्रदूषण से मुक्त रखना और स्वच्छ जल आपूर्ति सुनिश्चित करना था। इसके तहत केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की स्थापना की गई। इन बोर्डों को जल गुणवत्ता की निगरानी, प्रदूषण नियंत्रण के मानक तय करने, तथा प्रदूषण फैलाने वालों के विरुद्ध कार्यवाही करने की शक्तियाँ दी गईं। अधिनियम के अनुसार यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर जहरीले या हानिकारक पदार्थों को जल स्रोतों में छोड़ता है, जिससे निर्धारित मानकों का उल्लंघन होता है, तो वह अपराधी माना जाएगा और उस पर कानूनी दंड लगाया जा सकता है। इसके बाद, 1977 में इस अधिनियम में संशोधन किया गया, जिसे जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) संशोधन अधिनियम, 1977 कहा गया। इस संशोधित अधिनियम ने केंद्रीय और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

के अधिकारों को और अधिक सशक्त बनाया। इसके तहत बोर्डों को यह निम्न लिखित शक्तियां प्रदान की गई थीं।

1 उद्योगों और स्थानीय निकायों से प्रदूषण नियंत्रण उपायों की जानकारी प्राप्त कर सकें।

2.किसी भी प्रदूषक स्रोत का निरीक्षण कर सकें और आवश्यक दिशा–निर्देश जारी कर सकें।

3. प्रदूषण रोकने हेतु उपकरणों, संयंत्रों और प्रक्रियाओं के मानक तय कर सकें।

4. नियमों के उल्लंघन पर दोषियों के विरुद्ध दंडात्मक कार्रवाई कर सकें।

5. औद्योगिक ईकाइयां तरल कचरा तथा सीवेज के तरीकों के लिए बोर्ड से सहमति लें, बोर्ड किसी भी औद्योगिक इकाई को बंद करने के लिए कह सकता है। वह दोषी इकाई को पानी व बिजली आपूर्ति भी रोक सकता है।

इस प्रकार जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम, 1974 तथा 1977 जल प्रदूषण नियंत्रण के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। यह अधिनियम विषैले, नुकसानदेह और प्रदूषण फैलाने वाले कचरे को नदियों और प्रवाहों में फैकने पर रोक लगाने की व्याख्या करते है।

वायु प्रदूषण एवं नियंत्रण अधिनियम 1981– भारत में वायु प्रदूषण के प्रति जागृत करने में जून, 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्टाकहोम (स्वीडन) में मानव पर्यावरण सम्मेलन की भूमिका रही है। इस अधिनियम की पृष्ठभूमि जून 1972 में स्टॉकहोम (स्वीडन) में आयोजित संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन से जुड़ी है। इसका मुख्य उद्देश्य पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु समुचित कदम उठाना है। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में वायु की गुणवत्ता और वायु प्रदूषण का नियंत्रण सम्मिलित है। यह अधिनियम 29 मार्च 1981 को पारित किया गया और 16 मई 1981 से पूरे देश में लागू हुआ। अधिनियम का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक इकाइयों, मोटर–वाहनों और अन्य स्रोतों से निकलने वाले धुएँ, गैसों और प्रदूषक तत्वों के स्तर को नियंत्रित करना तथा मानक निर्धारित करना था। बाद में 1987 में इसमें संशोधन कर शोर प्रदूषण को भी इसके अंतर्गत शामिल किया गया। अधिनियम के कार्यान्वयन की जिम्मेदारी केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को दी गई, जबकि राज्यों में इसके क्रियान्वयन के लिए राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की स्थापना की गई। अनुच्छेद 19 के तहत केंद्रीय बोर्ड को राज्यों के बीच समन्वय स्थापित करने और नीति निर्धारण का अधिकार प्राप्त है। इस अधिनियम के अनुसार, राज्य सरकारें, प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की सलाह लेकर, किसी भी क्षेत्र को "वायु प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्र" घोषित कर सकती हैं। ऐसे क्षेत्रों में केवल स्वीकृत ईंधन का ही उपयोग किया जा सकता है तथा बिना बोर्ड की अनुमति के कोई भी नया उद्योग स्थापित नहीं किया जा सकता।

अधिनियम के अंतर्गत केंद्र और राज्य सरकारों तथा उनके प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों को निम्नलिखित शक्तियाँ प्रदान की गईं।

1 राज्य के किसी भी क्षेत्र को वायु प्रदूषित क्षेत्र घोषित करना।

2. प्रदूषण नियंत्रण क्षेत्रों में औद्योगिक गतिविधियों को रोकने अथवा सीमित करने का अधिकार।

3. औद्योगिक इकाई स्थापित करने से पहले अनापत्ति प्रमाण–पत्र की अनिवार्यता।

4. वायु प्रदूषकों के नमूने एकत्रित करने और उनकी जाँच करने का अधिकार।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

5. कसी भी औद्योगिक इकाई में प्रवेश कर वहाँ प्रदूषण नियंत्रण प्रावधानों के पालन की जाँच करने की शक्ति।

6.अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई और मुकदमा चलाने का अधिकार।

7. प्रदूषण फैलाने वाली औद्योगिक इकाइयों को बंद करने का अधिकार।

इस प्रकार, वायु प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम, 1981 भारत सरकार द्वारा वायु प्रदूषण की रोकथाम के लिए उठाया गया एक प्रभावी और सशक्त कदम है। यह अधिनियम न केवल वायु की गुणवत्ता बनाए रखने में सहायक है, बल्कि प्रदूषण फैलाने वाली इकाइयों पर नियंत्रण और दंडात्मक कार्रवाई की व्यवस्था करके पर्यावरण संरक्षण को सुदृढ़ बनाता है।

वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972– भारत में अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आश्रित हैं। भारत में कृषि, उद्योगों और शहरीकरण से वनों का काफी कटाव हुआ है। वनों के अधिक कटाव से अनेक वन्यजीव जंतुओं की कई प्रजातियाँ या तो लुप्त हो गई हैं या लुप्त होने के कगार पर हैं। वन्यजीवन के महत्त्व को ध्यान में रखकर व लुप्त होती प्रजातियों को बचाने के लिए भारत सरकार ने अनेक कदम उठाए हैं। सन 1952 में भारतीय वन्य जीवन बोर्ड का गठन किया गया। इस बोर्ड के अंतर्गत वन्य–जीवन पार्क और अभयारणय बनाए गए। 1972 में भारतीय वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम पारित किया गया। भारत जीव–जंतुओं और वनस्पतियों की समाप्त होने के खतरे में पडी प्रजातियों के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संबंधी समझौते (1976) का सदस्य बना। संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संगठन (युनेस्को) का 'मानव और जैव मण्डल' कार्यक्रम भी भारत में चलाया गया और विलुप्त होती विभिन्न प्रजातियों के संरक्षण के लिए परियोजनाएँ चलाई गईं। सिंह के संरक्षण के लिए 1972 में, बाघ के लिए 1973 में, मगरमक्वछ के लिए 1984 में तथा भूरे रंग के हिरण के लिए ऐसी परियोजनाएँ चलाई गईं।वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम (1972) में लुप्त होती प्रजातियों के संरक्षण की व्यवस्था है तथा इन जातियों के व्यापार की मनाही है। वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972 भारत सरकार द्वारा देश के वन्य जीवों और जैव विविधता की रक्षा के लिए बनाया गया एक अत्यंत महत्वपूर्ण कानून है। वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972 उद्देश्य संकटग्रस्त प्रजातियों की सुरक्षा करना, उनके शिकार, व्यापार और दोहन पर नियंत्रण रखना तथा प्राकृतिक पर्यावरण के संतुलन को बनाए रखना है। इस अधिनियम के अंतर्गत निम्न प्रमुख प्रावधान किए गए हैं।

1 संकटग्रस्त वन्य प्राणियों की सूची तैयार करना और उनके शिकार पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना, ताकि दुर्लभ प्रजातियाँ विलुप्त न हों।

2. संकटग्रस्त पौधों की रक्षा करना, जिससे पारिस्थितिक तंत्र का संतुलन बना रहे।

3. राष्ट्रीय उद्यानों, चिड़ियाघरों और अभयारण्यों में आवश्यक मूलभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराना और उनके प्रबंधन को सुदृढ़ बनाना।

4. लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण के साथ–साथ उनके अवैध व्यापार को रोकने के लिए कठोर प्रावधान करना।

5. चिड़ियाघरों और अभयारण्यों में वन्य प्राणियों की वंशवृद्धि को प्रोत्साहित करना, ताकि उनकी संख्या में वृद्धि हो सके।

6. वन्यजीवन के महत्व और लाभों के प्रति जनता में शिक्षा और जन–जागरूकता फैलाना।

7. केंद्रीय चिड़ियाघर प्राधिकरण (ब्मदजतंस ́वव ।नजीवतपजल) का गठन करना, जो देश के सभी चिड़ियाघरों की निगरानी और मानकीकरण सुनिश्चित करे।

8. वन्यजीवन परामर्श बोर्ड ॅपसकसपमि ।कअपेवतल ठवंतक) की स्थापना करना, जिसके कार्य और अधिकार अधिनियम में स्पष्ट रूप से निर्धारित किए गए हैं।

वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972 को समय के साथ और अधिक प्रभावी एवं व्यावहारिक बनाने के लिए 1986 और 1991 में संशोधन किए गए। इन संशोधनों के माध्यम से संरक्षण उपायों को और मजबूत किया गया तथा अवैध शिकार और व्यापार के खिलाफ दंडात्मक प्रावधानों को कड़ा बनाया गया। अधिनियम के सफल क्रियान्वयन हेतु वन्यजीवन संरक्षण निदेशक का पद सृजित किया गया, साथ ही दिल्ली, मुंबई, कोलकाता और चेन्नई में चार उपनिदेशकों की नियुक्ति की गई है। इनका कार्य देशभर में वन्यजीवन संरक्षण योजनाओं का समन्वय, निगरानी और कार्यान्वयन सुनिश्चित करना है।

इस प्रकार, वन्यजीवन संरक्षण अधिनियम, 1972 भारत में जैव विविधता की रक्षा और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने की दिशा में एक सशक्त और दूरदर्शी कदम है, जिसने वन्य प्राणियों और पौधों के संरक्षण को कानूनी आधार प्रदान किया।

वन संरक्षण अधिनियम, 1980– वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 भारत सरकार द्वारा वनों के संरक्षण और उनके सुनियोजित विकास के उद्देश्य से पारित किया गया एक अत्यंत महत्वपूर्ण कानून है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यद्यपि राष्ट्रीय वन नीति, 1952 घोषित की गई थी, फिर भी वनों के विकास पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। परिणामस्वरूप बढ़ती जनसंख्या, औद्योगीकरण और कृषि विस्तार के कारण वनों की अंधाधुंध कटाई होने लगी। इस स्थिति से निपटने और वनों के विनाश को रोकने के लिए भारत सरकार ने वन संरक्षण अधिनियम, 1980 लागू किया। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य था।

1. वनों का अंधाधुंध विनाश रोकना।

2. वन भूमि को गैर–वानिकी उपयोग (जैसे निर्माण कार्य, कृषि, खनन आदि) में प्रयोग से प्रतिबंधित करना।

3. वनों के संरक्षण को प्रोत्साहन देना तथा पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना।

4. अधिनियम के अनुसार, किसी भी राज्य सरकार को केंद्र सरकार की अनुमति के बिना किसी वन भूमि को गैर–वानिकी उपयोग के लिए प्रयोग करने, पट्टे पर देने या अनारक्षित घोषित करने की अनुमति नहीं है।

जनसंख्या वृद्धि और मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के कारण वनों पर दबाव स्वाभाविक रूप से बढ़ा है। इसलिए अधिनियम के तहत वनों के दोहन और विकास के बीच संतुलन बनाए रखने हेतु विशेष दिशानिर्देश जारी किए गए, जिनमें प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैंकृ

1. वन संबंधी सभी योजनाएँ इस प्रकार बनाई जाएँ कि वन संरक्षण को बढ़ावा मिले।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

2. वनों की कटाई जहाँ तक संभव हो टाली जाए, और केवल आवश्यक परिस्थितियों में ही अनुमति दी जाए।

3. पशुओं के लिए चारागाहों की व्यवस्था सुनिश्चित की जाए तथा चारा उत्पादन हेतु विशेष प्रावधान किए जाएँ।

4. कुछ क्षेत्रों में अस्थायी रूप से वनों की कटाई पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाए ताकि वहाँ पेड़–पौधे पुनः विकसित हो सकें।

5. पहाड़ों, ढलानों और जल स्रोतों के आसपास के वनों को पूर्ण रूप से संरक्षित रखा जाए, ताकि भूमि अपरदन और जल प्रदूषण न हो।

वन संरक्षण अधिनियम लागू होने से पहले (1951–1980) भारत में प्रतिवर्ष लगभग 1.5 लाख हेक्टेयर वन भूमि नष्ट हो रही थी। किंतु इस अधिनियम के लागू होने के बाद भूमि क्षरण की दर घटकर लगभग 55 हजार हेक्टेयर प्रति वर्ष रह गई। यह इस अधिनियम की सफलता और प्रभावशीलता को दर्शाता है। वन संरक्षण अधिनियम को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसमें 1988 में संशोधन किया गया। इस संशोधन के बाद वनों के संरक्षण, पुनरोद्धार और स्थानीय समुदायों की भागीदारी पर अधिक बल दिया गया। इस प्रकार, वन संरक्षण अधिनियम, 1980 भारत में वनों के संतुलित उपयोग, पर्यावरणीय स्थिरता और पारिस्थितिक संरक्षण की दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण और दूरदर्शी कदम है, जिसने वन भूमि की हानि को काफी हद तक रोकने में सफलता प्राप्त की।

ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण कानून- भारत में ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए कोई स्वतंत्र कानून नहीं है, बल्कि इसे वायु प्रदूषण के अंतर्गत शामिल किया गया है। वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम, 1981 में सन् 1987 के संशोधन के दौरान "ध्वनि प्रदूषकों" को भी "वायु प्रदूषकों" की परिभाषा में सम्मिलित किया गया। इसका अर्थ यह है, कि अब ध्वनि भी वायु गुणवत्ता को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख प्रदूषक मानी गई। इसके बाद पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 6 के अंतर्गत यह प्रावधान किया गया कि केंद्र सरकार ध्वनि, वायु और जल प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक नियम बना सकती है। इसी प्रावधान के अंतर्गत भारत सरकार ने ध्वनि प्रदूषण (विनियमन एवं नियंत्रण) नियम, 2000 लागू किए। जो कि निम्नवत हैं–

1. विभिन्न क्षेत्रों (जैसे औद्योगिक, व्यावसायिक, आवासीय और शांत क्षेत्र) के लिए ध्वनि स्तर के मानक निर्धारित किए गए।

2. रात के समय में लाउडस्पीकर, डीजे और पटाखों के प्रयोग पर समय सीमा और ध्वनि सीमा तय की गई।

3. स्कूलों, अस्पतालों और न्यायालयों के आसपास के क्षेत्रों को शांत क्षेत्र घोषित किया गया, जहाँ अत्यधिक ध्वनि करना निषिद्ध है।

4. इसके अतिरिक्त, भारत के विद्यमान राष्ट्रीय कानूनों के अंतर्गत भी ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के प्रावधान मौजूद हैं।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

5. भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 268 और धारा 290 के अंतर्गत ध्वनि प्रदूषण को सार्वजनिक उपद्रव की श्रेणी में रखा गया है, और दोषियों पर कानूनी कार्रवाई की जा सकती है।

6. पुलिस अधिनियम, 1861 के अंतर्गत पुलिस अधीक्षक को यह अधिकार दिया गया है, कि वह त्योहारों, उत्सवों या धार्मिक आयोजनों में ध्वनि विस्तारक यंत्रों के प्रयोग को नियंत्रित या सीमित कर सके।

इस प्रकार, भारत में ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के लिए यद्यपि कोई अलग अधिनियम नहीं है, फिर भी वायु प्रदूषण कानून, पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, और भारतीय दंड संहिता के संयुक्त प्रावधानों के माध्यम से इसे प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जाता है। इन सभी कानूनों का उद्देश्य नागरिकों को अत्यधिक ध्वनि से होने वाले शारीरिक, मानसिक और पर्यावरणीय दुष्प्रभावों से बचाना है।

पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 भारत सरकार द्वारा पारित एक व्यापक और प्रभावी कानून है, जिसका उद्देश्य देश में पर्यावरण की रक्षा, प्रदूषण नियंत्रण और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना है। इस अधिनियम की प्रेरणा संयुक्त राष्ट्र के प्रथम मानव पर्यावरण सम्मेलन (स्टॉकहोम, 5 जून 1972) से मिली, जहाँ विश्व के देशों ने पर्यावरण संरक्षण के लिए ठोस कदम उठाने का संकल्प लिया। भारत ने इस सम्मेलन के सिद्धांतों को अपनाते हुए 19 नवंबर 1986 से यह अधिनियम पूरे देश में लागू किया। यह अधिनियम चार अध्यायों और 26 धाराओं में विभाजित है, जो पर्यावरण के सभी प्रमुख पहलुओं को सम्मिलित करता है।

अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य-

1. पर्यावरण का संरक्षण एवं सुधार करना, वायु, जल, भूमि और जैव विविधता को प्रदूषण से मुक्त रखना।

2. स्टॉकहोम सम्मेलन के नियमों को लागू करना, मानव पर्यावरण से जुड़े अंतरराष्ट्रीय मानकों और समझौतों का पालन सुनिश्चित करना।

3. मानव, पशु, वनस्पति और सूक्ष्म जीवों की रक्षा करना, उन्हें प्रदूषण और हानिकारक तत्वों से बचाना।

4. पर्यावरण संरक्षण हेतु व्यापक कानूनी ढांचा तैयार करना, जिससे सभी पर्यावरणीय पहलू एक ही कानून के अंतर्गत आएँ।

5. विभिन्न पर्यावरणीय प्राधिकरणों के कार्यों में समन्वय स्थापित करना, ताकि पर्यावरण संरक्षण से संबंधित नीतियों का प्रभावी क्रियान्वयन हो सके।

6. पर्यावरण को क्षति पहुँचाने वालों के लिए दंड का प्रावधान करना, ताकि प्रदूषण फैलाने वालों पर कानूनी कार्रवाई की जा सके।

अधिनियम के तहत केंद्र सरकार की शक्तियाँ-

1. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम ने केंद्र सरकार को व्यापक अधिकार प्रदान किए हैं, जिनके तहत वह पर्यावरण की गुणवत्ता के मानक निर्धारित कर सकती है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

2. औद्योगिक क्षेत्रों पर नियंत्रण रख सकती है तथा प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों को प्रतिबंधित अथवा बंद कर सकती है।

3. दुर्घटनाओं और रासायनिक आपदाओं से बचाव हेतु सुरक्षा उपाय तय कर सकती है।

4. हानिकारक रासायनिक पदार्थों और अपशिष्टों के निपटान की व्यवस्था बना सकती है।

5. प्रदूषण से प्रभावित क्षेत्रों की जांच, अनुसंधान कार्यों का संचालन और पर्यावरण प्रयोगशालाओं की स्थापना कर सकती है।

6. इस अधिनियम की विशेषता यह है, कि इसमें नागरिकों को भी अधिकार दिया गया है, कि वे पर्यावरण कानून का उल्लंघन करने वाली किसी फैक्ट्री या संस्था के विरुद्ध अदालत में शिकायत दर्ज कर सकें।

इस प्रकार, पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 भारत का समग्र, सशक्त और दूरदर्शी कानून है, जिसने पर्यावरण की रक्षा के क्षेत्र में ठोस कानूनी ढांचा प्रदान किया और सरकार तथा नागरिकों दोनों को पर्यावरण सुरक्षा की जिम्मेदारी सौंपी।

जैव–विविधता संरक्षण अधिनियम, 2002 – भारत जैव–विविधता की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध देश है और विश्व में इसका स्थान बारहवाँ है। यहां लगभग 45,000 पौधों और 81,000 पशु प्रजातियों का निवास है, जो विश्व की कुल वनस्पति का लगभग 7.1ः और जीव–जंतुओं की कुल प्रजातियों का लगभग 6.5ः भाग है। जैव–विविधता के संरक्षण के लिए भारत सरकार ने वर्ष 2000 में "राष्ट्रीय जैव–विविधता संरक्षण क्रियान्वयन योजना" प्रारंभ की, जिसमें वैज्ञानिकों, पर्यावरणविदों, गैर–सरकारी संगठनों और आम नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित की गई। इसी दिशा में एक ठोस कदम के रूप में "जैव विविधता अधिनियम, 2002" लागू किया गया। इस अधिनियम का प्रमुख उद्देश्य है।

1. जैविक विविधता का संरक्षण, इसके घटकों का सतत् उपयोग, और जैविक संसाधनों से प्राप्त लाभों का समान रूप से वितरण।

2. इस कानून के तहत राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय तीनों स्तरों पर संस्थाओं के गठन का प्रावधान किया गया है।

3. राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण।

4. राज्य स्तर पर राज्य जैव विविधता बोर्ड।

5. स्थानीय स्तर पर जैव विविधता प्रबंधन समितियाँ।

6. यह संस्थाएँ मिलकर इस अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी ढंग से लागू करने का कार्य करती हैं।

केंद्र सरकार के उत्तरदायित्व–

1. ऐसी परियोजनाओं की जांच करना जो जैव–विविधता को नुकसान पहुँचा सकती हैं।

2. जैव–प्रौद्योगिकी से उत्पन्न नई प्रजातियों के दुष्प्रभावों पर नियंत्रण के उपाय सुनिश्चित करना।

3. स्थानीय समुदायों की पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों और जैव–संरक्षण विधियों की रक्षा करना।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

जैव विविधता अधिनियम, 2002 न केवल सरकार बल्कि आम नागरिकों की सहभागिता को भी बढ़ावा देता है। यह नीति, संस्थागत और वित्तीय स्तर पर सरकार को सशक्त बनाता है और परंपरागत ज्ञान व तकनीकों के सम्मान तथा संरक्षण को सुनिश्चित करता है। यह अधिनियम पर्यावरण संतुलन और सतत विकास की दिशा में भारत का अत्यंत महत्वपूर्ण कदम माना जाता है।

राष्ट्रीय जलनीति, 2002 – 21वीं सदी में जल के बढ़ते महत्व और इसकी कमी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने जल संसाधनों के नियोजन, विकास और प्रबंधन के लिए 1 अप्रैल 2002 को राष्ट्रीय जल लागू की। इस नीति का उद्देश्य जल के संरक्षण, समान वितरण और सतत उपयोग के लिए स्पष्ट और व्यावहारिक दिशा प्रदान करना था। इस नीति की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं।

1. नदी क्षेत्रीय संगठनः आजादी के बाद पहली बार नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों के लिए संगठनों के गठन पर सहमति बनी, ताकि जल का समुचित और संतुलित उपयोग हो सके।

2. जल उपयोग की प्राथमिकताः जल के उपयोग में पहली प्राथमिकता पेयजल को दी गई है। इसके बाद सिंचाई, जलविद्युत उत्पादन और औद्योगिक उपयोग को स्थान दिया गया है।

3. सामुदायिक भागीदारीः जल संसाधनों के विकास और प्रबंधन में सरकार के साथ जनसहभागिता को भी आवश्यक बताया गया है, ताकि जल संरक्षण सामूहिक प्रयास बने।

4. परियोजनाओं का मूल्यांकनः किसी भी जल परियोजना के निर्माण से लेकर उसके पूर्ण होने के बाद तक उसके मानव जीवन और पर्यावरण पर प्रभावों का मूल्यांकन अनिवार्य किया गया है।

5. जनजागरूकताः जल के संरक्षण और इसके विवेकपूर्ण उपयोग के लिए शिक्षा, पुरस्कार, और जन अभियानों के माध्यम से लोगों में चेतना बढ़ाने पर बल दिया गया है।

मानव जीवन के लिए जल के अति महत्व को देखते हुए, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने और सभी प्रकार की आर्थिक एवं विकासशील गतिविधियों के लिए और इसकी बढ़ती कमी को ध्यान में रखते हुए इसका उचित प्रबंधन तथा न्यायसंगत उपयोग करना अनिवार्य हो गया है। राष्ट्रीय जल नीति की सफलता पूर्णतः इसमें निहित सिद्धांतों एवं उद्देश्यों पर राष्ट्रीय सर्वसम्मित तथा वचनबद्धता बनाए रखने पर निर्भर करेगी।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2004– दिसंबर 2004 में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने भारत की राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का प्रारूप जारी किया। इस नीति का उद्देश्य देश में बढ़ती पर्यावरणीय समस्याओं को ध्यान में रखते हुए एक व्यापक और समग्र दृष्टिकोण अपनाना था। साथ ही इसमें यह भी माना गया कि वर्तमान पर्यावरण कानूनों और नियमों को बदलते समय और परिस्थितियों के अनुसार संशोधित करने की आवश्यकता है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2004 के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं।

1. संकटग्रस्त संसाधनों का संरक्षणः पर्यावरणीय रूप से महत्वपूर्ण और नष्ट हो रहे संसाधनों की रक्षा करना।

2. समान अधिकार सुनिश्चित करनाः पर्यावरणीय संसाधनों पर सभी लोगों, विशेषकर गरीब वर्गों के समान और न्यायपूर्ण अधिकार को सुनिश्चित करना।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

3. न्यायोचित एवं सतत उपयोगः प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार करना कि वे वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करें, और भावी पीढ़ियों के लिए भी उपलब्ध रहें।

4. नीति निर्माण में पर्यावरण को प्राथमिकताः आर्थिक और सामाजिक नीतियों के निर्माण में पर्यावरणीय पहलुओं को अनिवार्य रूप से शामिल करने की बात कही गई है।

5. भागीदारी और पारदर्शिताः संसाधनों के प्रबंधन में खुलेपन, उत्तरदायित्व और सामुदायिक भागीदारी को प्रोत्साहित करना।

नीति के क्रियान्वयन में राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर की विभिन्न संस्थाओं के साथ–साथ सरकार, स्थानीय समुदायों और गैर–सरकारी संगठनों (NGO) की साझी भागीदारी को अनिवार्य माना गया है।

इस नीति में कुछ मार्गदर्शक सिद्धांत भी दिए गए हैं।

1. प्रत्येक व्यक्ति को स्वस्थ और स्वच्छ पर्यावरण में जीवन का अधिकार है।

2. सतत विकास का केंद्र बिंदु मानव कल्याण है।

3. विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन बनाकर ही विकास का अधिकार प्राप्त किया जाना चाहिए।

4. "प्रदूषक भुगतान सिद्धांत" के अनुसार जो व्यक्ति अथवा संस्था पर्यावरण को हानि पहुंचाती है, उसे उसकी भरपाई करनी होगी।

5. स्थानीय संस्थाओं को सशक्त बनाना ताकि वे पर्यावरण संरक्षण में सक्रिय भूमिका निभा सकें।

संक्षेप में, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2004 का उद्देश्य ऐसा ढांचा तैयार करना है, जिससे विकास और पर्यावरण संरक्षण में संतुलन बना रहे तथा हर नागरिक को स्वस्थ, सुरक्षित और स्वच्छ पर्यावरण में जीने का अधिकार मिल सके।

वन अधिकार अधिनियम, 2006 – वन अधिकार अधिनियम (2006) भारत में वन एवं पर्यावरण से संबंधित एक ऐतिहासिक कानून है, जिसे 18 दिसंबर 2006 को पारित किया गया। यह अधिनियम उन समुदायों और जनजातियों के अधिकारों की रक्षा से जुड़ा है जो सदियों से जंगलों में रहकर अपनी आजीविका के लिए वन संसाधनों पर निर्भर रहे हैं, लेकिन औपनिवेशिक काल से ही उन्हें इन संसाधनों से वंचित कर दिया गया था। एक ओर यह वन संरक्षण को सुनिश्चित करता है, वहीं दूसरी ओर वनवासियों और जनजातीय समुदायों के सामाजिक–आर्थिक अधिकारों की बहाली का प्रयास करता है। यह कानून जंगलों में निवास करने वाले लोगों और अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों की रक्षा करता है जो वन संसाधनों पर निर्भर हैं। यह उन्हें चार प्रमुख अधिकार प्रदान करता है जो कि निम्नलिखित हैं।

1. भूमि पर अधिकारः जो भूमि वे पीढ़ियों से उपयोग कर रहे हैं, उस पर उन्हें वैध स्वामित्व और उपयोग का अधिकार दिया गया है।

2. प्राकृतिक संसाधनों का उपयोगः उन्हें जंगलों में पशु चराने, जल स्रोतों के उपयोग और अन्य वन उत्पादों (जैसे लकड़ी, फल, औषधीय पौधे) के संग्रह का अधिकार प्राप्त है।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

3. पुनर्वास का अधिकारः यदि किसी कारणवश उनका विस्थापन आवश्यक हो, तो उनके पुनर्वास और पुनर्स्थापन की व्यवस्था अनिवार्य रूप से की जानी चाहिए।

4. भागीदारी का अधिकारः स्थानीय समुदायों को वन प्रबंधन और संरक्षण की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी का अधिकार दिया गया है।

अधिनियम के अनुसार, जंगलों में रहने वाले लोगों का विस्थापन केवल वन्यजीवन संरक्षण के उद्देश्य से ही किया जा सकता है और वह भी स्थानीय समुदाय की सहमति से।

वन अधिकार अधिनियम (2006) का मूल उद्देश्य-

वन अधिकार अधिनियम (2006) का मूल उद्देश्य निम्न लिखित है।

1. वनों पर स्थानीय लोगों के अधिकारों को वैध मान्यता देना।

2. वन संरक्षण और सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देना।

3. गैर–कानूनी कब्जों को रोकना, तथा विस्थापन को अंतिम उपाय मानते हुए प्रभावित लोगों को न्यायपूर्ण पुनर्वास प्रदान करना।

यह अधिनियम वन संरक्षण और मानवाधिकारों के बीच संतुलन स्थापित करने वाला महत्वपूर्ण कदम है, जो जनजातीय समुदायों को सशक्त बनाकर उन्हें देश के सतत विकास में भागीदार बनाता है।

निष्कर्ष- भारत विश्व के उन चुनिंदा देशों में शामिल हैं, जिनके संविधानों में पर्यावरण का विशेष उल्लेख है। भारत ने पर्यावरणीय कानूनों का व्यापक निर्माण किया है तथा हमारी नीतियाँ पर्यावरण संरक्षण में भारत की पहल दर्शाती हैं। पर्यावरण संबंधी सभी विधेयक होने पर भी भारत में पर्यावरण की स्थिति काफी गंभीर बनी हुई है। नाले, नदियां तथा झीलें औद्योगिक कचरे से भरी हुई हैं। दिल्ली में यमुना नदी एक नाला बनकर रह गई है। वन क्षेत्र में कटाव लगातार बढता जा रहा है, -जिसके परिणाम हमें हाल ही में बिहार में आई भीषण बाढ़ के रूप में स्पष्ट देखने को मिलता है। भारत में जिस प्रकार से पर्यावरण कानूनों को लागू किया जा रहा है उसे देखते हुए लगता है कि इन कानूनो के महत्त्व को समझा ही नहीं गया है। इस दिशा में पर्यावरण नीति (2004) को गंभीरता से लागू करने की आवश्यकता है।

पर्यावरण को सुरक्षित करने के प्रयासों में आम जनता की भागीदारी भी सुनिश्चित करने की जरूरत है। पर्यावरण संरक्षण में न्यायपालिका ने भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके प्रयासों से स्वच्छ पर्यावरण मौलिक अधिकार का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है। दिल्ली में प्रदूषित इकाइयों की बंदी तथा स्थांनातरण, सी.एन.जी का प्रयोग, ताजमहल को प्रदूषण से बचाना, पर्यावरण को शैषणिक पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाना तथा संचार माध्यमों के द्वारा पर्यावरण के महत्त्व का प्रचार–प्रसार आदि न्यायपालिका के सराहनीय प्रयासों की एक झलक है। जनहित याचिकाओं ने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में गैर–सरकारी संगठनों, नागरिक समाज तथा आम आदमी की भागीदारों को प्रोत्साहित किया है। यह इसके प्रयासों का ही फल है, कि आज सरकार तथा नीति निर्माताओं की सूची में पर्यावरण प्रथम मुद्दा हैं।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 05, Issue 05, May 2026

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. Agarwal, K. C. (2010). Environmental biology. New Delhi: Nidi Publ. Ltd.
2. Chhatre, A., & Agrawal, A. (2009). Forest management and environmental policies in India. New Delhi: Oxford University Press.
3. Central Pollution Control Board (CPCB). (2021). Water and air quality status reports. New Delhi: CPCB.
4. Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC). (2023). Annual report 2022–23. New Delhi: Government of India.
5. National Biodiversity Authority (NBA). (2019). India's biodiversity act, 2002: Implementation report. Chennai: NBA.
6. United Nations Environment Programme (UNEP). (2019). Global environment outlook – GEO-6. Nairobi: UNEP.